बेदी समग्र

2

राजकमल प्रकाशन
नयी दिल्ली पटना

लिप्यंतरण :
ताहिर हुसैन
मुईन एजाज़
अनवर पाशा
पुनरीक्षण :
नरेश 'नदीम'

मूल्य : रु. 700.00
दो खंडों का पूरा सेट

© वीणा बेदी

प्रथम संस्करण : 1995

प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन प्रा. लि.
1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज,
नई दिल्ली-110002

लेज़र कम्पोजिंग : मोहित ग्राफिक्स,
नई दिल्ली-110003

मुद्रक : शक्ति प्रिंटिंग प्रेस,
दरियागंज, नई दिल्ली-110002

BEDI SAMAGRA-2

ISBN : 81-7178-442-9

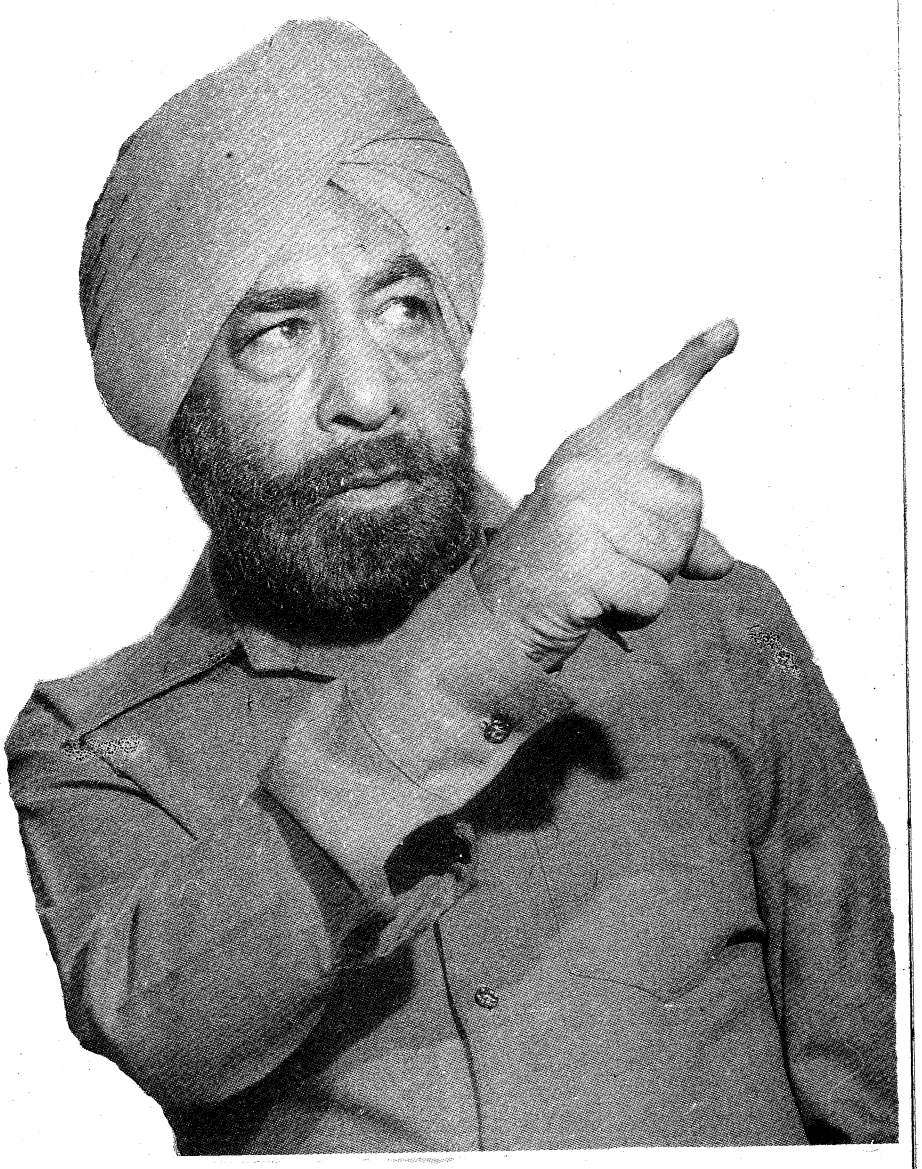

▲ यही है : बेदी

फोटो सौजन्य : पद्मा सचदेव

लाजवंती

"हथ लाइयाँ कुम्हलाँनी लाजवंती दे बूटे !"
(यह छुई-मुई के पौधे हैं री, हाथ भी लगाओ तो कुम्हला जाते हैं।)
—एक पंजाबी गीत

बँटवारा हुआ और बेशुमार ज़ख़्मी लोगों ने उठकर अपने बदन पर से ख़ून पोंछ डाला और फिर सब मिलकर उनकी तरफ़ मुतवज्जह[1] हो गए जिनके बदन सही व सालिम थे, लेकिन दिल ज़ख़्मी।

गली-गली, मुहल्ले-मुहल्ले में 'फिर बसाओ' कमेटियाँ बन गई थीं और शुरू-शुरू में बड़ी तनदही[2] के साथ 'कारोबार में बसाओ', 'ज़मीन पर बसाओ' और 'घरों में बसाओ' प्रोग्राम शुरू कर दिया गया था। लेकिन एक प्रोग्राम ऐसा था जिसकी तरफ़ किसी ने तवज्जह[3] न दी थी। वह प्रोग्राम मुग़विया[4] औरतों के सिलसिले में था, जिसका स्लोगन था 'दिल में बसाओ'। और इस प्रोग्राम की नारायण बावा के मंदिर और उसके आसपास बसनेवाले क़दामतपसंद[5] तबक़े की तरफ़ से बड़ी मुख़ालफ़त होती थी ...

इस प्रोग्राम को हरकत में लाने के लिए मंदिर के पास मुहल्ले 'मुल्ला शकूर' में एक कमेटी क़ायम हो गई और ग्यारह वोटों की अकसरियत[6] से सुंदरलाल बाबू को उसका सेक्रेटरी चुन लिया गया। वकील साहब सदर, चौकी कलाँ का बूढ़ा मुहर्रिर और मुहल्ले के दूसरे मातबर लोगों का ख़याल था कि सुंदरलाल से ज़्यादा जाँफ़िशानी[7] के साथ उस काम को कोई और न कर सकेगा। शायद इसलिए कि सुंदरलाल की अपनी बीवी अग़वा हो चुकी थी और उसका नाम था भी लाजो, लाजवंती।

चुनांचे प्रभातफेरी निकालते हुए जब सुंदरलाल बाबू, उसका साथी रसालू और नेकीराम वग़ैरह मिलकर गाते : "हथ लाइयाँ कुम्हलाँनी लाजवंती दे बूटे" तो सुंदरलाल की आवाज़ एकदम बंद हो जाती और वह ख़ामोशी के साथ चलते-चलते लाजवंती की बाबत सोचता : 'जाने वह कहाँ होगी, किस हाल में होगी, हमारी बाबत क्या सोच रही होगी, वह कभी आएगी भी या नहीं ?'... और पथरीले फ़र्श पर चलते-चलते उसके क़दम लड़खड़ाने लगते।

और अब तो यहाँ तक नौबत आ गई थी कि उसने लाजवंती के बारे में सोचना ही छोड़ दिया था। उसका ग़म अब दुनिया का गम हो चुका था। उसने अपने दुख से बचने

---

1. ध्यानाकर्षित; 2. एकाग्रता; 3. ध्यान; 4. अपहृत; 5. रूढ़िवादी; 6. बहुमत; 7. समर्पण-भावना।

के लिए लोकसेवा में अपने-आपको ग़र्क़ कर दिया। इसके बावजूद दूसरे साथियों की आवाज़ में आवाज़ मिलाते हुए उसे यह ख़याल ज़रूर आता, इनसानी दिल कितना नाज़ुक होता है। ज़रा सी बात पर उसे ठेस लग सकती है। वह लाजवंती के पौधे की तरह है, जिसकी तरफ़ हाथ भी बढ़ाओ तो कुम्हला जाता है। लेकिन उसने अपनी लाजवंती के साथ बदसुलूकी करने में कोई भी कसर न उठा रखी थी। वह उसे जगह-बेजगह उठने-बैठने, खाने की तरफ़ बेतवज्जही[1] बरतने और ऐसी ही मामूली-मामूली बातों पर पीट दिया करता था।

और लाजो एक पतली शहतूत की डाल की तरह नाज़ुक सी देहाती लड़की थी। ज़्यादा धूप देखने की वजह से उसका रंग सँवला चुका था। तबीयत में एक अजीब तरह की बेक़रारी थी। उसका इज़्तराब[2] शबनम के उस क़तरे की तरह था जो पारा किरास के बड़े से पत्ते पर कभी इधर कभी उधर लुढ़कता रहता है। उसका दुबलापन उसकी सेहत के ख़राब होने की दलील न थी। एक सेहतमंदी की निशानी थी, जिसे देखकर भारी-भरकम सुंदरलाल पहले तो घबराया, लेकिन जब उसने देखा कि लाजो हर क़िस्म का बोझ, हर क़िस्म का सदमा, हत्ता कि[3] मार-पीट तक सह गुज़रती है तो वह अपनी बदसुलूकी को ब-तदरीज[4] बढ़ाता गया और उसने उन हदों का ख़याल भी न किया, जहाँ पहुँच जाने के बाद किसी भी इनसान का सब्र टूट सकता है। इन हदों को धुँधला देने में लाजवंती खुद भी तो ममद[5] साबित हुई थी। चूँकि वह देर तक उदास न बैठ सकती थी इसलिए बड़ी से बड़ी लड़ाई के बाद भी सुंदरलाल के सिर्फ़ एक बार मुस्कुरा देने पर वह अपनी हँसी न रोक सकती और लपककर उसके पास चली आती और गले में बाँहें डालते हुए कह उठती : "फिर मारा तो मैं तुमसे नहीं बोलूँगी ‴" साफ़ पता चलता था, वह एकदम सारी मारपीट भूल चुकी है। गाँव की दूसरी लड़कियों की तरह वह भी जानती थी कि मर्द ऐसा ही सुलूक किया करते हैं, बल्कि औरतों में कोई भी सरकशी[6] करती तो लड़कियाँ खुद ही नाक पर उँगली रखके कहतीं : 'ले वह भी कोई मर्द है भला, औरत जिसके क़ाबू में नहीं आती ‴' और यह मारपीट उनके गीतों में चली गई थी। खुद लाजो गाया करती थी : 'मैं शहर के लड़के से शादी न करूँगी। वह बूट पहनता है और मेरी कमर बड़ी पतली है ‴।' लेकिन पहली ही फ़ुर्सत में लाजो ने शहर ही के एक लड़के से लौ लगा ली और उसका नाम था सुंदरलाल, जो एक बरात के साथ लाजवंती के गाँव चला आया था और जिसने दूल्हा के कान में सिर्फ़ इतना सा कहा था : 'तेरी साली तो बड़ी नमकीन है यार, बीवी भी चटपटी होगी।' लाजवंती ने सुंदरलाल की इस बात को सुन लिया था, मगर वह यह भूल ही गई की सुंदरलाल कितने बड़े-बड़े और भद्दे बूट पहने हुए है और उसकी अपनी कमर कितनी पतली है!

और प्रभातफेरी के समय ऐसी ही बातें सुंदरलाल को याद आतीं और वह यही सोचता : एक बार, सिर्फ़ एक बार लाजो मिल जाए तो मैं सचमुच ही दिल में बसा लूँ और लोगों को बता दूँ कि इन बिचारी औरतों के अग़वा हो जाने में उनका कोई कुसूर नहीं। फ़सादियों की हवसनाकियों[7] का शिकार हो जाने में उनकी कोई ग़लती नहीं। वह

1. उपेक्षा; 2. बेचैनी; 3. यहाँ तक कि; 4. क्रमशः; 5. सहायक; 6. उद्दंडता; 7. लोलुपताओं।

समाज जो इन मासूम और बेकुसूर औरतों को कुबूल नहीं करता, उन्हें अपना नहीं लेता ‴ एक गला-सड़ा समाज है और उसे ख़त्म कर देना चाहिए ‴ वह उन औरतों को घरों में आबाद करने की तलक़ीन[1] किया करता और उन्हें ऐसा मर्तबा देने की प्रेरणा करता जो घर में किसी भी औरत, किसी भी माँ, बेटी, बहन या बीवी को दिया जाता है। फिर वह कहता : 'उन्हें इशारे और किनाए से[2] भी ऐसी बातों की याद नहीं दिलानी चाहिए जो उनके साथ हुई; क्योंकि उनके दिल ज़ख़्मी हैं। वह नाजुक हैं, छुई-मुई की तरह ‴ हाथ भी लगाओ तो कुम्हला जाएँगे ‴'

गोया 'दिल में बसाओ' प्रोग्राम को अमली जामा पहनाने के लिए मुहल्ला मुल्ला शकूर की इस कमेटी ने कई प्रभातफेरियाँ निकालीं। सुब्ह चार-पाँच बजे का वक़्त उनके लिए मौज़ूँतरीन[3] वक़्त होता था। न लोगों का शोर, न ट्रैफिक की उलझन। रात-भर चौकीदारी करनेवाले कुत्ते तक बुझे हुए तनूरों में सर देकर पड़े होते थे। अपने-अपने बिस्तरों में दुबके हुए लोग प्रभातफेरीवालों की आवाज़ सुनकर सिर्फ़ इतना कहते : "ओ! वही मंडली है!" और फिर कभी सब्र और कभी तुनकमिज़ाजी से वह बाबू सुंदरलाल का प्रोपेगेंडा सुना करते। वे औरतें जो बड़ी महफ़ूज़[4] उस पार पहुँच गई थीं, गोभी के फूलों की तरह फैली पड़ी रहतीं और उनके ख़ाविंद उनके पहलू में डंठलों की तरह अकड़े पड़े-पड़े प्रभातफेरी के शोर पर एहतजाज[5] करते हुए मुँह में कुछ मिनमिनाते चले जाते। या कहीं कोई बच्चा थोड़ी देर के लिए आँखें खोलता और 'दिल में बसाओ' के फ़रियादी और अंदोहगीं[6] प्रोपेगेंडे को सिर्फ़ एक गाना समझ के फिर सो जाता।

लेकिन सुब्ह के समय कान में पड़ा हुआ शब्द बेकार नहीं जाता। वह सारा दिन एक तकरार के साथ दिमाग़ में चक्कर लगाता रहता है और बाज़ वक़्त[7] तो इनसान उसके मानी को भी नहीं समझता, पर गुनगुनाता चला जाता है। इसी आवाज़ के घर कर जाने की बदौलत ही, उन्हीं दिनों जबकि मिस मृदुला साराभाई हिंद और पाकिस्तान के दरमियान अग़वाशुदा औरतें तबादले में लाईं तो मुहल्ला मुल्ला शकूर के कुछ आदमी उन्हें फिर से बसाने के लिए तैयार हो गए। उनके वारिस शहर से बाहर चौकी कलाँ पर उनसे मिलने के लिए गए। मुग़विया औरतें और उनके लवाहक़ीन[8] कुछ देर एक-दूसरे को देखते रहे और फिर सिर झुकाए अपने-अपने बरबाद घरों को फिर से आबाद करने के काम पर चल दिए। रिसालू और नेकीराम और सुंदरलाल बाबू कभी 'महेंद्र सिंह ज़िंदाबाद' और कभी 'सोहनलाल ज़िंदाबाद' के नारे लगाते ‴ और वह नारे लगाते रहे, हत्ता कि उनके गले सूख गए ‴

लेकिन मुग़विया औरतों में कुछ ऐसी भी थीं जिनके शौहरों, जिनके माँ, बाप, बहन और भाइयों ने उन्हें पहचानने से इनकार कर दिया था। आख़िर वह मर क्यों न गईं? अपनी इफ़्फ़त[9] और इस्मत को बचाने के लिए उन्होंने ज़हर क्यों न खा लिया? कुएँ में छलाँग क्यों न लगा दी? वह बुज़दिल थीं जो इस तरह ज़िंदगी से चिमटी हुई थीं। सैकड़ों-हज़ारों औरतों ने इस्मत लुट जाने से पहले अपनी जान दे दी। लेकिन उन्हें क्या

1. उपदेश; 2. परोक्ष रूप से; 3. सबसे उपयुक्त; 4. सुरक्षित; 5. विरोध; 6. दुखद; 7. कभी-कभी; 8. रिश्तेदार; 9. पवित्रता।

पता कि वह ज़िंदा रहकर किस बहादुरी से काम ले रही हैं, कैसे पथराई हुई आँखों से मौत को घूर रही हैं, ऐसी दुनिया में, जहाँ उनके शौहर तक उन्हें नहीं पहचानते। फिर उनमें से कोई जी ही जी में अपना नाम दोहराती; 'सुहागवंती ''' सुहागवाली '''' और अपने भाई को जम्मे-ग़फ़ीर[1] में देखकर आख़िरी बार इतना कहती : "तू भी मुझे नहीं पहचानता बिहारी ? मैंने तुझे गोदी खिलाया था, रे !" और बिहारी चिल्ला देना चाहता था। फिर वह माँ-बाप की तरफ़ देखता और माँ-बाप अपने जिगर पर हाथ रखकर नारायण बाबा की तरफ़ देखते और निहायत बेबसी के आलम में नारायण बाबा आसमान की तरफ़ देखता जो दरअस्ल कोई हक़ीक़त नहीं रखता और जो सिर्फ़ हमारी नज़र का धोखा है। जो सिर्फ़ एक हद है, जिसके पार हमारी निगाहें काम नहीं करतीं।

लेकिन फ़ौजी ट्रक में मिस साराभाई तबादले में जो औरतें लाईं, उनमें लाजो न थी। सुंदरलाल ने उम्मीदो-बीम[2] से आख़िरी लड़की को ट्रक से नीचे उतरते देखा और फिर उसने बड़ी ख़ामोशी और बड़े अज़्म[3] से अपनी कमेटी की सरगर्मियों को दोचंद[4] कर दिया। अब वह सिर्फ़ सुब्ह के समय ही प्रभातफेरी के लिए न निकलते थे बल्कि शाम को भी जुलूस निकालने लगे, और कभी-कभी एक-आध छोटा-मोटा जलसा भी करने लगे, जिसमें कमेटी का बूढ़ा सदर वकील कालका प्रशाद सूफ़ी खँकारों से मिली-जुली एक तक़रीर कर दिया करता और सालू एक पीकदान लिए ड्यूटी पर हमेशा मौजूद रहता। लाउडस्पीकर से अजीब तरह की आवाज़ें आतीं। फिर कहीं नेकीराम, मुहर्रिर चौकी कुछ कहने के लिए उठते। लेकिन वह जितनी भी बातें कहते और जितने भी शास्त्रों और पुराणों का हवाला देते, उतना ही अपने मक़सद के ख़िलाफ़ बातें करते और यूँ मैदान हाथ से जाते देखकर सुंदरलाल बाबू उठता लेकिन वह दो फ़िक़रों के अलावा कुछ भी न कह पाता। उसका गला रुँध जाता। उसकी आँखों से आँसू बहने लगते और रुआँसा होने के कारण वह तक़रीर न कर पाता। आख़िर बैठ जाता। लेकिन मजमे पर एक अजीब तरह की ख़ामोशी छा जाती और सुंदरलाल बाबू की इन दो बातों का असर, जो कि उसके दिल की गहराइयों से चली आतीं, वकील कालका प्रशाद सूफ़ी की सारी नासेहाना फ़साहत[5] पर भारी होता। लेकिन लोग वहीं रो देते, अपने जज़्बात को आसूदा[6] कर लेते और फिर ख़ाली-उल-ज़ेहन[7] घर लौट जाते '''

एक रोज़ कमेटीवाले साँझ के समय भी प्रचार करने चले आए और होते-होते क़दामतपसंदों के गढ़ में पहुँच गए। मंदिर के बाहर पीपल के एक पेड़ के इर्द-गिर्द सीमेंट के थड़े पर कई श्रद्धालु बैठे थे और *रामायण* की कथा हो रही थी। नारायण बाबा *रामायण* का वह हिस्सा सुना रहे थे, जहाँ एक धोबी ने अपनी धोबन को घर से निकाल दिया था और कह दिया कि मैं राजा रामचंद्र नहीं जो इतने साल रावण के साथ रह आने पर भी सीता को बसा लेगा और रामचंद्रजी ने महासतवंती सीता को घर से निकाल दिया ऐसी हालत में, जबकि वह गर्भवती थी। क्या इससे भी बढ़कर रामराज का कोई सुबूत मिल सकता है ? नारायण बाबा ने कहा : "यह है रामराज ! जिसमें एक धोबी की बात को भी उतनी ही क़द्र की निगाह से देखा जाता है।"

1. भारी भीड़;2. आशा-निराशा;3. संकल्प;4. दोगुना;5. उपदेशमूलक वाक्-सौंदर्य;6. तृप्त;7. ख़ाली-दिमाग़।

कमेटी का जुलूस मंदिर के पास रुक चुका था और लोग *रामायण* की कथा और श्लोक का वर्णन सुनने के लिए ठहर चुके थे। सुंदरलाल आख़िरी फ़िक़रे सुनते हुए कह उठा : "हमें ऐसा रामराज नहीं चाहिए बाबा !"

"चुप रहो जी ''' तुम कौन होते हो ?" ''' "ख़ामोश !" मजमे से आवाज़ें आईं और सुंदरलाल ने बढ़कर कहा : "मुझे बोलने से कोई नहीं रोक सकता।"

फिर मिलीजुली आवाज़ें आईं : "ख़ामोश ! ''' हम नहीं बोलने देंगे।" और एक कोने में से यह भी आवाज़ आई : "मार देंगे !"

नारायण बाबा ने बड़ी मीठी आवाज़ में कहा : "तुम शास्त्रों की मान-मर्यादा को नहीं समझते सुंदरलाल !"

सुंदरलाल ने कहा : "मैं एक बात तो समझता हूँ बाबा, रामराज में धोबी की आवाज़ तो सुनी जाती है लेकिन सुंदरलाल की नहीं।"

इन्हीं लोगों ने, जो अभी मारने पर तुले थे, अपने नीचे से पीपल की गूलरें हटा दीं और फिर से बैठते हुए बोल उठे : "सुनो, सुनो, सुनो '''"

रसालू और नेकीराम ने सुंदरलाल बाबू को ठोक दिया और सुंदरलाल बोले : "श्रीराम नेता थे हमारे। पर यह क्या बात है बाबाजी, उन्होंने धोबी की बात को सत्य समझ लिया, मगर इतनी बड़ी महारानी के सत्य पर विश्वास न कर पाए ?"

नारायण बाबा ने अपनी दाढ़ी की खिचड़ी पकाते हुए कहा : "इसलिए कि सीता उनकी अपनी पत्नी थी। सुंदरलाल ! तुम इस बात की महानता को नहीं जानते।"

"हाँ बाबा," सुंदरलाल बाबू ने कहा : "इस संसार में बहुत सी बातें हैं जो मेरी समझ में नहीं आतीं। पर मैं सच्चा रामराज उसे समझता हूँ जिसमें इनसान अपने-आप पर भी जुल्म नहीं कर सकता। अपने-आपसे बेइंसाफ़ी करना उतना ही बड़ा पाप है जितना किसी दूसरे से बेइंसाफी करना ''' आज भी भगवान राम ने सीता को घर से निकाल दिया है, इसलिए कि वह रावण के पास रह आई है ''' इसमें क्या कुसूर था सीता का ? क्या वह भी हमारी बहुत सी माओं-बहनों की तरह एक छल और कपट की शिकार न थी ? इसमें सीता के सत्य और असत्य की बात है या राक्षस रावण के वहशीपन की, जिसके दस सर इनसान के थे लेकिन एक और सबसे बड़ा सर गधे का था ?

"आज हमारी सीता निर्दोष घर से निकाल दी गई है ''' सीता ''' लाजवंती '''" और सुंदरलाल बाबू ने रोना शुरू कर दिया। रिसालू और नेकीराम ने तमाम वह सुर्ख़ झंडे उठा लिए जिन पर आज ही स्कूल के छोकरों ने बड़ी सफ़ाई से नारे काटके चिपका दिए थे और वह सब "सुंदरलाल बाबू ज़िंदाबाद" के नारे लगाते हुए चल दिए। जुलूस में से एक ने कहा : "महासती सीता, ज़िंदाबाद !" एक तरफ़ से आवाज़ आई : "श्रीरामचंद्र '''"

और फिर बहुत सी आवाज़ें आईं : "ख़ामोश ! ख़ामोश !" और नारायण बाबा की महीनों की कथा अकारत[1] चली गई। बहुत से लोग जुलूस में शामिल हो गए, जिसके आगे-आगे वकील कालका प्रशाद और हुकमसिंह मुहर्रिर चौकी कलाँ जा रहे थे; अपनी बूढ़ी छड़ियों

1. व्यर्थ।

को ज़मीन पर मारते और एक फ़ातिहाना सी आवाज़ पैदा करते हुए ''' और उनके दरमियान कहीं सुंदरलाल जा रहा था। उसकी आँखों से अभी तक आँसू बह रहे थे। आज उसके दिल को बड़ी ठेस लगी थी और लोग बड़े जोश के साथ एक-दूसरे के साथ मिलकर गा रहे थे :

"हथ लाइयाँ कुम्हलाँनी लाजवंती दे बूटे ''' !"

अभी गीत की आवाज़ लोगों के कानों में गूँज रही थी। अभी सुब्ह भी नहीं हो पाई थी और मुहल्ला मुल्ला शकूर के मकान 414 की विधवा अभी तक अपने बिस्तर में कर्बनाक[1] सी अँगड़ाइयाँ ले रही थी कि सुंदरलाल का 'गराईं' लालचंद, जिसे अपना असरो-रसूख़ इस्तेमाल करके सुंदरलाल और ख़लीफ़ा कालका प्रशाद ने राशन डिपो दे दिया था, दौड़ा-दौड़ा आया और अपनी गाढ़े की चादर से हाथ फैलाते हुए बोला –

"बधाई हो सुंदरलाल !"

सुंदरलाल ने मीठा तंबाकू चिलम में रखते हुए कहा : "किस बात की बधाई लालचंद ?"

"मैंने लाजो भाभी को देखा है।"

सुंदरलाल के हाथ से चिलम गिर गई और मीठा तंबाकू फ़र्श पर बिखर गया : "कहाँ देखा है ?" उसने लालचंद को कंधों से पकड़ते हुए पूछा और जल्द जवाब न पाने पर झँझोड़ दिया।

"वागा की सरहद पर।"

सुंदरलाल ने लालचंद को छोड़ दिया और इतना सा बोला : "कोई और होगी।"

लालचंद ने यक़ीन दिलाते हुए कहा : "नहीं भैया, वह लाजो ही थी, लाजो !"

"तुम उसे पहचानते भी हो ?" सुंदरलाल ने फिर से मीठे तंबाकू को फ़र्श पर से उठाते और हथेली पर मसलते हुए पूछा और ऐसा करते हुए उसने रिसालो की चिलम हुक़्के पर से उठा ली और बोला : "भला क्या पहचान है उसकी ?"

"एक तंदोला (गोदना) ठोड़ी पर है, दूसरा गाल पर '''"

"हाँ ''' हाँ ''' हाँ !" और सुंदरलाल ने ख़ुद ही कह दिया : "तीसरा माथे पर।" वह नहीं चाहता था अब कोई ख़दशा[2] रह जाए और एकदम उसे लाजवंती के जाने-पहचाने जिस्म के सारे तंदोले याद आ गए, जो उसने बचपने में अपने जिस्म पर बनवा लिए थे, जो उन हलके-हलके सब्ज़ दानों की मानिंद थे, जो छुईमुई के पौधे के बदन पर होते हैं और जिसकी तरफ़ इशारा करते ही वह कुम्हलाने लगता है। बिलकुल उसी तरह इन तंदोलों की तरफ़ उँगली करते ही लाजवंती शरमा जाती थी '''और गुम हो जाती थी, अपने-आप में सिमट जाती थी। गोया उसके सब राज़ किसी को मालूम हो गए हों और किसी नामालूम ख़ज़ाने के लुट जाने से वह मुफ़लिस हो गई हो ''' सुंदरलाल का सारा जिस्म एक अनजाने ख़ौफ़, एक अनजानी मुहब्बत और उसकी मुक़द्दस[3] आग में फुँकने लगा। उसने फिर से लालचंद को पकड़ लिया और पूछा –

"लाजो वागा कैसे पहुँच गई ?"

लालचंद ने कहा : "हिंद और पाकिस्तान में औरतों का तबादला हो रहा था ना।"

1. व्यथा से भरी; 2. आशंका; 3. पवित्र।

"फिर क्या हुआ '''?" सुंदरलाल ने उकड़ूँ बैठते हुए कहा : "क्या हुआ फिर ?"

रसालू भी अपनी चारपाई पर उठ बैठा और तंबाकूनोशों की मख़सूस[1] खाँसी खाँसते हुए बोला : "सचमुच आ गई है लाजवंती भाभी ?"

लालचंद ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा : "वागा पर सोलह औरतें पाकिस्तान ने दे दीं और उसके एवज़ में सोलह औरतें ले लीं ''' लेकिन एक झगड़ा खड़ा हो गया। हमारे वालंटियर एतराज़ कर रहे थे कि तुमने जो औरतें दी हैं उनमें अधेड़, बूढ़ी और बेकार औरतें ज़्यादा हैं। इस तनाज़े[2] पर लोग जमा हो गए। उस वक़्त उधर से वालंटियरों ने लाजो भाभी को दिखाते हुए कहा : 'तुम इसे बूढ़ी कहते हो ? देखो ''' देखो ''' जितनी औरतें तुमने दी हैं उनमें से एक भी बराबरी करती है इसकी ?' और वहाँ लाजो भाभी सबकी नज़रों के सामने अपने तंदोले छुपा रही थी।

"फिर झगड़ा बढ़ गया। दोनों ने अपना-अपना 'माल' वापस ले लेने की ठान ली। मैंने शोर मचाया : 'लाजो ''' लाजो भाभी '''' मगर हमारी क़ौम के सिपाहियों ने हमें ही मार-मार के भगा दिया।"

और लालचंद अपनी कोहनी दिखाने लगा, जहाँ उसे लाठी पड़ी थी। रसालू और नेकीराम चुपचाप बैठे रहे और सुंदरलाल कहीं दूर देखने लगा। शायद सोचने लगा, लाजो आई भी पर न आई ''' और सुंदरलाल की शक्ल ही से जान पड़ता था जैसे वह बीक़ानेर का सेहरा[3] फाँदकर आया है और अब कहीं दरख़्त की छाँव में, ज़बान निकाले हाँफ रहा है। मुँह से इतना भी नहीं निकलता : 'पानी दे दो।' उसे यूँ महसूस हुआ, बँटवारे से पहले और बँटवारे के बाद का तशद्दुद[4] अभी तक कारफ़रमा[5] है। सिर्फ़ उसकी शक्ल बदल गई है। अब लोगों में पहला सा दरेग़ भी नहीं रहा। किसी से पूछो, साँभरवाला में लहनासिंह रहा करता था और उसकी भाभी बंतो – वह तो झट से कहता, 'मर गए' और उसके बाद मौत और उसके मफ़हूम[6] से बिलकुल बेख़बर, बिलकुल आरी[7] आगे बढ़ता चला जाता। इससे भी एक क़दम आगे बढ़कर बड़े ठंडे दिल से ताजिर इनसानी माल, इनसानी गोश्त और पोस्त[8] की तिजारत और उसका तबादला करने लगे। मवेशी ख़रीदनेवाले किसी भैंस या गाय का जबड़ा खोलकर दाँतों से उसकी उम्र का अंदाज़ा करते थे।

अब वह जवान औरत के रूप, उसके निखार, उसके अज़ीज़तरीन राज़ों, उसके तंदोलों की सरे-आम नुमाइश करने लगे। तशद्दुद अब ताजिरों की नस-नस में बस चुका है, पहले मंडी में माल बिकता था और भाव-ताव करनेवाले हाथ मिलाकर उस पर एक रूमाल डाल लेते और यूँ 'गुप्ती' कर लेते गोया रूमाल के नीचे उँगलियों के इशारों से सौदा हो जाता था। अब 'गुप्ती' का रूमाल भी हट चुका था और सामने सौदे हो रहे थे और लोग तिजारत के आदाब भी भूल गए थे। यह सारा लेन-देन, यह कारोबार पुराने ज़माने की दास्तान मालूम हो रहा था, जिसमें औरतों की आज़ादाना ख़रीदो-फ़रोख़्त का क़िस्सा बयान किया जाता है। अज़-बयक अनगिनत उरियाँ[9] औरतों के सामने खड़ा उनके जिस्मों को टोह-टोह के देख रहा है और जब वह किसी औरत के जिस्म को उँगली लगाता है तो

1. विशिष्ट; 2. झगड़ा; 3. रेगिस्तान; 4. हिंसा, अत्याचार; 5. कार्यरत; 6. भाव; 7. रहित; 8. खाल; 9. नंगी।

उस पर एक गुलाबी सा गढ़ा पड़ जाता है और उसके इर्द-गिर्द एक ज़र्द सा हलक़ा[1] और फिर ज़र्दियाँ और सुर्ख़ियाँ एक-दूसरे की जगह लेने के लिए दौड़ती हैं ··· अज़-बयक आगे गुज़र जाता है और नाक़ाबिले-क़ुबूल औरत एक एतराफ़े-शिकस्त[2], एक इनफ़आलियत[3] के आलम में एक हाथ से इज़ारबंद थामे और दूसरे से अपने चेहरे को अवाम की नज़रों से छिपाए सिसकियाँ लेती है।

सुंदरलाल अमृतसर (सरहद) जाने की तैयारी कर ही रहा था कि उसे लाजो के आने की ख़बर मिली। एकदम से ऐसी ख़बर मिल जाने से सुंदरलाल घबरा गया। उसका एक क़दम फ़ौरन दरवाज़े की तरफ़ बढ़ा लेकिन वह पीछे लौट आया। उसका जी चाहता था कि वह रूठ जाए और कमेटी के तमाम प्लेकार्डों और झंडियों को बिछाकर बैठ जाए और फिर रोए। लेकिन वहाँ ज़ब्बात का यूँ मुज़ाहिरा[4] मुमकिन न था। उसने मर्दाना-वार[5] इस अंदरूनी कशमकश का मुक़ाबला किया और अपने क़दमों को नापते हुए चौकी क़लाँ की तरफ़ चल दिया, क्योंकि वही जगह थी, जहाँ मग़विया औरतों की डिलीवरी दी जाती थी।

अब लाजो सामने खड़ी थी और एक ख़ौफ़ के जज़्बे से काँप रही थी। वही सुंदरलाल को जानती थी, उसके सिवाय कोई न जानता था। वह पहले ही उसके साथ ऐसा सुलूक करता था और अब जबकि वह एक ग़ैर मर्द के साथ ज़िंदगी के दिन बिताकर आई थी, न जाने क्या करेगा ? सुंदरलाल ने लाजो की तरफ़ देखा। वह ख़ालिस इस्लामी तर्ज़ का लाल दुपट्टा ओढ़े थी और बाएँ बुक्कल मारे हुए थी ··· आदतन, महज़ आदतन ··· दूसरी औरतों में घुलमिल जाने और बिल-आख़िर[6] अपने सैयाद के दाम[7] से भाग जाने की आसानी थी। और वह सुंदरलाल के बारे में इतना ज़्यादा सोच रही थी कि उसे कपड़े बदलने या दुपट्टा ठीक से ओढ़ने का भी ख़याल न रहा। वह हिंदू और मुसलमान तहज़ीब[8] के बुनियादी फ़र्क़ ··· दाएँ बुक्कल और बाएँ बुक्कल में इम्तियाज़[9] करने से क़ासिर[10] रही थी। अब वह सुंदरलाल के सामने खड़ी थी और काँप रही थी, एक उम्मीद और एक डर के जज़्बे के साथ ···

सुंदरलाल को धक्का-सा लगा। उसने देखा, लाजवंती का रंग कुछ निखर गया था और वह पहले की बनिस्बत कुछ तनदुरुस्त सी नज़र आती थी। नहीं, वह मोटी हो गई थी ··· सुंदरलाल ने जो कुछ लाजो के बारे में सोच रखा था वह सब ग़लत था। वह समझता था, ग़म में घुल जाने के बाद लाजवंती बिलकुल मरियल हो चुकी होगी और आवाज़ उसके मुँह से निकाले न निकलती होगी। इस ख़याल से कि वह पाकिस्तान में बड़ी ख़ुश रही है, उसे बड़ा सदमा हुआ। लेकिन वह चुप रहा, क्योंकि उसने चुप रहने की क़सम खा रखी थी। अगरचे वह न जान पाया कि इतनी ख़ुश थी तो फिर चली क्यों आई ? उसने सोचा : 'शायद हिंद सरकार के दबाव की वजह से अपनी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ यहाँ आना पड़ा ···' लेकिन एक चीज़ वह न समझ सका कि लाजवंती का सँवलाया हुआ चेहरा ज़र्दी

1. घेरा; 2. पराजय का स्वीकार; 3. शर्मिंदगी; 4. प्रदर्शन; 5. मर्द की तरह; 6. अंततः; 7. फंदा; 8. सभ्यता; 9. भेद; 10. असमर्थ।

लिए हुए था और ग़म, महज़ ग़म से उसके बदन के गोश्त ने हड्डियों को छोड़ दिया था। वह ग़म की कसरत[1] से मोटी हो गई थी और सेहतमंद नज़र आती थी। लेकिन यह ऐसी सेहतमंदी थी जिसमें दो क़दम चलने पर आदमी का साँस फूल जाता है ···

मुग़विया के चेहरे पर पहली निगाह डालने पर तास्सुर[2] कुछ अजीब सा हुआ। लेकिन उसने सब ख़यालात का एक इसबाती[3] मर्दानगी से मुक़ाबला किया। और भी बहुत से लोग मौजूद थे ··· किसी ने कहा ··· "हम नहीं लेते मुसलमरान (मुसलमान) की जूठी औरत ···" और यह आवाज़ रसालू, नेकीराम और चौकी क़लाँ के बूढ़े मुहर्रिर के नारों में गुम होकर रह गई। इन सब आवाज़ों से अलग कालका प्रशाद की फटती और चिल्लाती आवाज़ आ रही थी ··· वह खाँस भी लेता और बोलता भी जाता। वह इस नई हक़ीक़त, इस नई शुद्धि का शिद्दत से[4] क़ायल हो चुका था। यूँ मालूम होता था आज इसने कोई नया वेद, कोई नया पुराण और शास्त्र पढ़ लिया है और अपने इस हुसूल[5] में दूसरों को भी हिस्सेदार बनाना चाहता है ··· इन सब लोगों और इनकी आवाज़ों में घिरे हुए लाजो और सुंदरलाल अपने डेरे को जा रहे थे और ऐसा जान पड़ता था, जैसे हज़ारों साल पहले के रामचंद्र और सीता किसी बहुत लंबे इख़लाक़ी[6] बनवास के बाद अयोध्या लौट रहे हैं। एक तरफ़ तो लोग ख़ुशी के इज़हार में दीपमाला कर रहे हैं और दूसरी तरफ़ उन्हें इतनी लंबी अज़ीयत[7] दिए जाने पर तास्सुफ़[8] भी।

लाजवंती के चले आने पर भी सुंदरलाल बाबू ने इसी शिद्दत से 'दिल में बसाओ' प्रोग्राम को जारी रखा। उसने क़ौल और फ़ेल[9] दोनों एतबार से उसे निभा दिया था और वह लोग, जिन्हें सुंदरलाल की बातों में ख़ाली-ख़ूली जज़्बातियत[10] नज़र आती थी, क़ायल होना शुरू हुए। अकसर लोगों के दिल में ख़ुशी थी और बेशतर के दिल में अफ़सोस। मकान 414 की बेवा के अलावा मुहल्ला मुल्ला शकूर की बहुत सी औरतें सुंदरलाल बाबू सोशल वर्कर के घर आने से घबराती थीं।

लेकिन सुंदरलाल को किसी की एतना[11] या बेएतनाई[12] की परवा न थी। उसके दिल की रानी आ चुकी थी और उसके दिल का ख़िला[13] पट चुका था। सुंदरलाल ने लाजो की स्वर्ण-मूर्ति को अपने दिल के मंदिर में स्थापित कर लिया था और ख़ुद दरवाज़े पर बैठा उसकी हिफ़ाज़त करने लगा था। लाज़ो जो पहले ख़ौफ़ से सहमी रहती थी, सुंदरलाल के ग़ैरमुतवक़्क़ा[14] नर्म सुलूक को देखकर आहिस्ता-आहिस्ता खुलने लगी।

सुंदरलाल लाजवंती को अब लाजो के नाम से नहीं पुकारता था, वह उसे कहता था : "देवी !" और लाजो एक अनजान ख़ुशी से पागल हुई जाती थी। वह कितना चाहती थी कि सुंदरलाल को अपनी वारदात कह सुनाए और सुनाते-सुनाते इस क़दर रोए कि उसके सब गुनाह धुल जाएँ। लेकिन सुंदरलाल लाजो की वह बातें सुनने से गुरेज़ करता था और लाजो अपने खुल जाने में भी एक तरह से सिमटी रहती। अलबत्ता जब सुंदरलाल सो जाता तो उसे देखा करती और अपनी इस चोरी में पकड़ी जाती। जब सुंदरलाल उसकी

1. अधिकता; 2. प्रभाव; 3. सकारात्मक; 4. तीव्रता से; 5. उपलब्धि; 6. नैतिक; 7. यातना; 8. अफ़सोस; 9. कर्म; 10. भावुकता; 11. मान; 12. उपेक्षा; 13. शून्य; 14. अप्रत्याशित।

वजह पूछता तो वह 'नहीं' 'यूँ नहीं' 'ऊँहूँ' के सिवा और कुछ न कहती और सारे दिन का थका-हारा सुंदरलाल फिर ऊँघ जाता ··· अलबत्ता शुरू-शुरू में एक दफ़ा सुंदरलाल ने लाजवंती के सियाह दिनों के बारे में सिर्फ़ इतना सा पूछा था –

"कौन था वह ?"

लाजवंती ने निगाहें नीची करते हुए कहा : "जमाल"··· फिर वह अपनी निगाहें सुंदरलाल के चेहरे पर जमाए हुए कुछ कहना चाहती थी। लेकिन सुंदरलाल एक अजीब सी नज़रों से लाजवंती के चेहरे की तरफ़ देख रहा था और उसके बालों को सहला रहा था। लाजवंती ने फिर आँखें नीची कर लीं और सुंदरलाल ने पूछा –

"अच्छा सुलूक करता था वह ?"

"हाँ !"

"मारता तो नहीं था ?"

लाजवंती ने अपना सिर सुंदरलाल की छाती पर सरकाते हुए कहा : "नहीं !" और फिर बोली : "मारता नहीं था, पर मुझे उससे ज़्यादा डर आता था। तुम मुझे मारते भी थे पर मैं तुमसे डरती नहीं थी ··· अब तो न मारोगे ?"

सुंदरलाल की आँखों में आँसू उमड़ आए और उसने बड़ी नदामत[1] और बड़े तास्सुफ़[2] से कहा, "नहीं देवी ! अब नहीं ··· नहीं मारूँगा ···"

'देवी !" लाजवंती ने सोचा और वह भी आँसू बहाने लगी।

और उसके बाद लाजवंती सबकुछ कह देना चाहती थी, लेकिन सुंदरलाल ने कहा –

"जाने दो बीती बातें ! इसमें तुम्हारा क्या कुसूर है ? इसमें कुसूर है हमारे समाज का, जो तुझ ऐसी देवियों को अपने यहाँ इज़्ज़त की जगह नहीं देता। वह तुम्हारी हानि नहीं करता, अपनी करता है।"

और लाजवंती की मन की मन ही में रही। वह कह न सकी सारी बात और चुपकी-दुबकी पड़ी रही और अपने बदन की तरफ़ देखती रही, जो बँटवारे के बाद अब 'देवी' का बदन हो चुका था, लाजवंती का न था। वह खुश थी, बहुत खुश। लेकिन एक ऐसी खुशी में सरशार,[3] जिसमें एक शक था और वसवसे[4]। वह लेटी-लेटी अचानक बैठ जाती, जैसे इंतहाई खुशी के लम्हों में कोई आहट पाकर एकाएकी उसकी तरफ़ मुतवज्जह[5] हो जाए ···

जब बहुत से दिन बीत गए तो खुशी की जगह पूरे शक ने ले ली। इसलिए नहीं कि सुंदरलाल बाबू ने फिर वही पुरानी बदसुलूकी शुरू कर दी थी, बल्कि इसलिए कि वह लाजो से बहुत ही अच्छा सुलूक करने लगा था। ऐसा सुलूक जिसकी लाजो मुतवक़्क़ा[6] न थी ··· वह सुंदरलाल की वही पुरानी लाजो होना चाहती थी जो गाजर से लड़ पड़ती और मूली से मान जाती। लेकिन अब लड़ाई का सवाल ही न था। सुंदरलाल ने उसे यह महसूस करा दिया जैसे वह लाजवंती काँच की कोई चीज़ है, जो छूते ही टूट जाएगी ··· और लाजो आईने में अपने सरापा[7] की तरफ़ देखती और आख़िर इस नतीजे

1. शर्मिंदगी; 2. अफ़सोस; 3. सराबोर; 4. अंदेशे; 5. ध्यानाकर्षित; 6. आशावान; 7. पूरा बदन।

पर पहुँचती कि वह और तो सबकुछ हो सकती है, पर लाजो नहीं हो सकती। वह बस गई, पर उजड़ गई ··· सुंदरलाल के पास उसके आँसू देखने के लिए आँखें थीं और न आहें सुनने के लिए कान ··· प्रभातफेरियाँ निकलती रहीं और मुहल्ला मुल्ला शकूर का सुधारक रसालू और नेकीराम के साथ मिलकर उसी आवाज़ में गाता रहा –

"हाथ लाइयाँ कुम्हलाँनी लाजवंती दे बूटे ···!"